

सम्पादकीय



पृच्छामि त्वाम् !



डॉ. आशू गोयल
अन्तरराष्ट्रीय कार्याध्यक्ष, गीता परिवार
एवं कार्यक्रम निदेशक, लर्नगीता

मनीषियों ने कहा है कि अज्ञान का कोई अस्तित्व नहीं होता है, प्रत्युत ज्ञान का अभाव ही अज्ञान है। अज्ञान को ज्ञान में परिवर्तित करने हेतु मन में जिज्ञासा का प्रादुर्भाव होता है जिसे भगवद्गीता में भगवान ने तीसरी प्रकार की भक्ति बताया। " आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ॥ 7.16॥" आर्त, अर्थार्थी, जिज्ञासु और ज्ञानी यह चार प्रकार के मेरे भक्त हैं, ऐसा भगवान ने कहा। जिज्ञासाओं के निवारण से ही ज्ञान की प्राप्त होती है। शास्त्रों एवं उपनिषदों का प्राकट्य जिज्ञासा के गर्भ से हुआ है। उपनिषद् का अर्थ है गुरु के समीप बैठकर ज्ञान प्राप्त करना। केनोपनिषद् का आरम्भ प्रश्न से ही हुआ - 'केनेषितं पतति प्रेषितं मनः' "किसके द्वारा प्रेषित यह मन अपने लक्ष्य पर जाकर गिरता है।" बृहदारण्यकोपनिषद् में मैत्रेयी ने याज्ञवल्क्य से प्रश्न पूछा - "सा होवाच मैत्रेयी येनाहं नामृता स्यां किमहं तेन कुर्यां यदेव भगवान्वेद तदेव मे ब्रूहीति ॥" नचिकेता ने यम से अति गोपनीय काल के विषय में प्रश्न पूछें - "मृत्यो यस्मिन् महति साम्पराये यत् इदं विचिकित्सन्ति नः तत् ब्रूहि।" सारे उपनिषद् जिज्ञासा और समाधान से ही भरें हैं।

रामचरितमानस में भी पार्वती जी ने भगवान शंकर के सामने अपनी जिज्ञासा प्रकट की - "अति आरति पूछउँ सुरराया। रघुपति कथा कहहु करि दाया॥" भारद्वाज जी ने याज्ञवल्क्य के सामने भी रखा - "रामु कवन प्रभु पूछउँ तोही। कहिअ बुझाइ कृपानिधि मोही॥" इसी प्रकार गरुड़ जी ने काकभुसुंडि जी से कहा - "नाथ मोहि निज सेवक जानी। सप्त प्रस्न मम कहहु बखानी॥"

इसी प्रकार सम्पूर्ण भारतीय वाङ्मय में ये गुरु शिष्य संवाद सर्वत्र व्याप्त है। वास्तव मे जिस जिज्ञासा का आरंभ स्वयं से स्वयं में होता है अर्थात् आरम्भ में 'त्वां पृच्छामि' के स्थान पर 'स्वामेव पृच्छामि' की स्थिति होती है किन्तु जब साधक को उसका उत्तर नहीं प्राप्त होता है तो वह आप्त पुरुष, संत, ज्ञानी अथवा शास्त्र की शरण में जाता है एवं 'पृच्छामि त्वां' का आविर्भाव होता है।

स्वामी दयानन्द जब ज्ञानप्राप्ति हेतु प्रथम बार विरजानंद जी के घर पहुँचे तथा दरवाजा खटखटाया तो विरजानन्द जी ने भीतर से पूछा - 'कौन?'

इसका उत्तर दयानन्द जी ने दिया - 'बहुत दिनों से इस प्रश्न का उत्तर ढूँढ रहा हूँ किन्तु मिल नही पाया अतः यही

जानने हेतु आपके द्वार पर आया हूँ।'

विरजानन्द जी ने दरवाजा खोल दिया और कहा- 'मैं तुम्हारे जैसे जिज्ञासु की ही प्रतीक्षा में था।'

परम पिता परमेश्वर की असीम अनुकम्पा से हमें सद्गुरु के रूप में प.पू. स्वामी श्रीगोविन्ददेव गिरिजी महाराज जैसे शुद्ध सन्त का पावन सान्निध्य प्राप्त हुआ। अब हमारा कर्तव्य है कि हम दयानन्द जी के समान बनें एवं हम अब जिज्ञासा के साथ बस इतना बोलना है - 'पृच्छामि त्वां....'। भगवान ने भी अर्जुन को गीता के चतुर्थ अध्याय के 34वें श्लोक में यही कहा है -

तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया।
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः॥4.34॥

आज विश्व को जो यह गीता जैसा महान ग्रंथ प्राप्त हुआ है वह अर्जुन के 'पृच्छामि त्वां' से ही अवतरित हुआ है, और यह भाव श्रीकृष्ण व अर्जुन के पचास वर्षों के सम्बन्ध में कभी नहीं आया किन्तु जब कुरुक्षेत्र के समरांगण में अर्जुन मोहग्रस्त हुआ तो आगे का मार्ग दृष्टिगोचर न होने के कारण अर्जुन भगवान की शरणागत हुए और उनके मुख से गीता का जन्म देने वाला यह श्लोक साकार हुआ -

कार्पण्यदोषोपहतस्वभावः
पृच्छामि त्वां धर्मसंमूढचेताः।
यच्छ्रेयः स्यान्निश्चितं ब्रूहि तन्मे
शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम्॥2.7॥

एक सन्त के श्रीमुख से सुना कि जब जीवन में कभी अर्जुन जैसी दयनीय दशा हो जाये तथा कर्तव्य एवं अकर्तव्य के मध्य संशय उत्पन्न हो जाये तो गीतामाता को हाथ में रखकर 108 बार इस श्लोक का अनुष्ठान करने से भगवान किसी न किसी रूप में समाधान कर देते हैं।

'पृच्छामि त्वां' अर्थात् जिज्ञासु की वृत्ति हम सबमें जागृत हो और किसी तत्त्वज्ञानी महात्मा से उसका समाधान पाकर हम अपने मानव जीवन का कल्याण कर सकें, यही प्रभुचरणों में प्रार्थना।

गीता मैत्री के इस सप्तम संस्करण में प्रति संस्करण की भांति विशेष उत्सवों, गीता मैत्री मिलन एवं विभिन्न भाषाओँ के लेख तथा साथ में न्यूजलैटर को आकर्षित बनाने हेतु कविताओं एवं खेलों का भी समावेश किया गया है। इस बार के संस्करण में गीता भक्ति अमृत महोत्सव एवं फैकल्टी NPS ट्रेनिंग के सत्रों को भी सचित्र लिखा गया है। आशा है पाठकों को पिछले छह महीनो में लर्नगीता में सम्पन्न हुई सभी क्रियाओं कि जानकारी सुलभता से मिल पायेगी।

आप सभी पाठकों को भी आवाहन करता हूँ कि अपने लेख, कवितायें, चित्रादि सामाग्री newsletter.geetamaitri@gmail.com पर अवश्य भेजें।

- डॉ. आशू गोयल

